कुष्ठ रोगः कारण, लक्षण व उपचार

मोहित कुमार तिवारी[1] एवं प्रतिभा गुप्ता[2]
[1]पता–1/626, रुचि खण्ड, शारदा नगर, लखनऊ – 226 002 उ0प्र0, भारत
[2]वैज्ञानिक–ई, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पर्यावरण वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
भारत सरकार, आचार्य जगदीश चन्द्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा–711103, प0बं0, भारत
drmohit2010@gmail.com, drpratibha2011@rediffmail.com

प्राप्त तिथि–25.10.2018, स्वीकृत तिथि–08.11.2018

सार– कुष्ठ रोग(कोढ़) लेप्रोसी प्राचीन काल से ही एक अत्यन्त गंभीर विगलनकारी संक्रामक रोग माना जाता रहा है। यह रोग एक दण्डाणु *माइकोबैक्टेरिया लेपरी* या *माइकोबैक्टेरिया लेप्रोमेटोसिस* या *माइकोबैक्टेरिया लेपरीम्यूरियम* से होता है। ये रोग गाँठों अथवा अंगों विशेष रूप से हाथों व पैरों के विगलन के रूप में परिलक्षित होता है। प्राचीन आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में कुष्ठ रोग के लक्षण व उपचार का विस्तृत वर्णन है, आधुनिक चिकित्सा पद्धति में बहु औषधि उपचार जिसमें रिफेम्पसीन, ओफलॉक्सिन, मिनोसाइक्लीन नामक जीवाणुरोधी (एंटीबायोटिक) औषधियों को मिला कर दिया जाता है, जो इस रोग के उपचार में काफी प्रभावी सिद्ध हुआ है। तदुपरांत भी भारतीय उप महाद्वीप में जागरुकता के अभाव व अशिक्षा के कारण इस रोग पर प्रभावी ढंग से नियन्त्रण नहीं हो सका है, यद्यपि गत कुछ वर्षों में पहले की अपेक्षा स्थिति में सुधार हुआ है।

बीज शब्द– माइकोबैक्टीरिया, विगलन कुष्ठ, भक्षण कोशिका, चलमूगरा ओडोरेटस।

Leprosy: Cause, Symptons and Treatment

Mohit Kumar Tiwari[1] and Pratibha Gupta[2]
[1]Address-626, Ruchi Khand, Sharda Nagar, Lucknow-226002 U.P.
[2]Scientist E, Botanical Survey of India, Ministry of Environment Forest and Climet Change
Government of India, A.J.C.Bose Indian Botanic Garden
Haorah-711 103, West Bengal, India
drmohit2010@gmail.com, drpratibha2011@rediffmail.com

Abstract- Leprosy is considerd to be a very severe degenerative and communicable disease since long. This disease is caused by bacillus *Mycobacterium leprae* or *Mycobacterium leprometosis* or *Mycobacterium leprimurium,* which is expressed as nodes on the body or degeneration of body parts especially of hand and legs. There is a detailed description of symptoms and treatment of leprosy in ancient Ayurvedic medical litrature. In morden medical system multi drug therapy treatment is used, combining Rifampcin, Ofloxcin and Minocycline antibiotics which are very effective. Inspite of that in Indian sub continent very effective results were not found due to lack of awareness and education, although improvement is visible now as compared to past.

Key words- Mycobacteria, degenerative leprosy, macrophage cells, chalmugra odoratous.

1. **परिचय–** कुष्ठ रोग का इतिहास अति प्राचीन है, इस रोग का वर्णन, विवरण, लक्षण और उपचार का सबसे पुराना संदर्भ भारत से ही मिला है, द ऑक्सफोर्ड इलेस्ट्रेड कम्पेनियन टू मेडिसिन के अनुसार भारत में कुष्ठ रोग का उल्लेख व उपचार अथर्ववेद व इनसाइक्लोपीडीया ब्रिटेनिका 2008 में कीर्न्स व नैश के अनुसार सुश्रुत संहिता 600 ई0पू0 में इस रोग का विवरण व उपचार लिखा है। सुश्रुत ने अपने ग्रन्थों में इसका विवरण विस्तार से किया है, अर्न्तराष्ट्रीय वैज्ञानिक शोधकर्ताओं ने भी इसे स्वीकार किया हैं। इसके पश्चात् मिस्र से 600 ई0पू0 एवं चीन से 250 वर्ष ई0पू0 इस रोग का विवरण मिलता है। आज विश्व के लगभग समस्त विकासशील देश इस रोग से प्रभावित हैं। उन्नीसवीं सदी से बीसवीं सदी के उत्तरार्ध तक विश्व इससे गम्भीर रुप से प्रभावित था, इसे कुष्ठ रोग, विगलनकारी रोग, लेप्रोसी इत्यादि नामों से जाना जाता था। चीन, म्यांमार, बर्मा, नेपाल, (अविभाजित भारत के) पूर्वोत्तर भाग, बंगाल (आज बांग्ला देश व पश्चिम बंगाल) दक्षिण भारत के केरल, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र व मध्यप्रदेश के कुछ भाग उत्तर प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ, उड़ीसा के अधिकतर भाग, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, सोमालिया, रोमानिया, लाइबेरिया, अफ्रीका का अधिकांश

भाग इस रोग से प्रभावित था। विश्व के 60 प्रतिशत कुल रोगी भारतीय भू–भाग में हैं, प्रतिवर्ष लगभग 1.25 लाख नये रोगी संक्रमित होते हैं।[1] बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक इस रोग को अत्यन्त भयंकर एवं संक्रमणकारी माना जाता था, संक्रमित व्यक्तियों को समाज से अलग बस्तियों में रखा जाता था। भारत सहित विश्व के अनेक देशों में कुष्ठ रोगियों की बस्तियां आज भी विद्यमान हैं। भारत में 1000 से अधिक कुष्ठ रोगी बस्तियां हैं। वर्ष 2009 में राजस्थान के बालथाल नामक स्थान से 4000 वर्ष पुराना नर कंकाल मिला जिस पर कुष्ठ रोग के लक्षण थे। ये संम्भवतः विश्व का सबसे प्राचीन कुष्ठ रोग का मामला है, जो रोग के इतिहास को मानव प्रागैतिहासिक काल तक ले जाता।[2] हेन्सन ने वर्ष 1872 में कुष्ठ रोग उत्पन्न करने वाले दण्डाणु(बैसिलस) *माइकोबैक्टीरियम लैपरी* का पता लगाया, अतः इसे हेन्सन रोग भी कहते हैं। मनुष्य इसका एक मात्र पोषक है।[3] यद्यपि माइकोबैक्टीरिया समूह के सबसे पहले मनुष्य में कुष्ठ रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणु का पता चला था, परन्तु इसके उपरांत भी इसको पोषक मनुष्य के शरीर के बाहर संवर्धन माध्यम में सवंर्धित करने में सफलता नहीं मिली है, प्रयोगशाला में चूहे के पंजों व नौ धारियों वाले आरमाडिलो(नाइन बैंडेड आरमाडिलो–*डेसीपस नोवेमसिनक्टस*) के शरीर में ही इसका संवर्धन किया जा सका है, इसी कारण इस रोगाणु पर पोषक के बाहर (इन विट्रो) अधिक अध्ययन नहीं किये जा सके हैं। मनुष्य के अतिरिक्त *माइकोबैक्टीरियम लैपरी* संक्रमण नौ धारियों वाले आरमाडिलो चिम्पैन्जी(*पेट्रो ग्लोडाइटस*), मैगाम्वे बन्दर(*सरकोसिबस अटाइस*), साइनोमोल्गस बन्दर(*मकाका फैसीकुलेरिस*) में इसका संक्रमण पाया गया है, इन जन्तुओं के द्वारा भी यह रोग अन्य मनुष्यों तथा उपरोक्त प्रजाति के अन्य जन्तुओं में फैल सकता है, *माइकोबैक्टीरियम लैपरी* मनुष्य की उपचर्मीय गोलाकार कोशिकाओं में पाया जाता है, इन कोशिकाओ को कुष्ठ कोशिका भी कहा जाता हैं। ये जीवाणु रचना, आकार, लक्षणों व अभिरंजक गुणों मे क्षय रोग जीवाणु(*माइकोबैक्टेरियम टयूबरक्यूलोसिस*) से काफी समानता दर्शाता है। इनकी लम्बाई 4–6 μ, ग्राम घनात्मक, अचल, दण्डाकार या किंचित वृत्ताकार होता है। ये हल्के अम्ल रोधी होते हैं, सान्द्र अम्ल से ये विरंजित हो जाते हैं। ये केवल मनुष्य का पूर्णाश्रयी परजीवी है। ये शरीर के किसी भी अंग को प्रभावित कर सकता है। इसके संक्रमण एवं विस्तरण की प्रक्रिया अभी तक पूर्ण रुप से स्थापित नही हैं। संम्भवतः उसका संक्रमण त्वचा व नासाश्लेष्म से नवीन पोषक में पहुंचता है जो लम्बे समय तक कुष्ठ रोगी के संपर्क में रहने से ही संभव होता है। इस रोग का संक्रमण मुख्यतः परिधीय तन्त्रिका तन्त्र (पेरीफेरल नवर्स सिस्टम) पर होता है बाद में यह रोग त्वचा, नासाश्लेष्मा, यकृत, प्लीहा, लसिका ग्रन्थियो, नेत्र, वृक्क इत्यादि में फैल सकता है। ऐसा माना जाता था कि यह रोग अत्याधिक संक्रामक होता है। परन्तु अब यह पुष्टि हो चुकी है, कि लगभग 95 प्रतिशत लोग इस रोग के लिये अनुवांशिक रूप से प्रतिरक्षित होते हैं। केवल कुछ लोगों में जिनमें प्राकृतिक रुप से इस रोग के लिये प्रतिरक्षी तन्त्र सक्रिय नही होता वे लोग ही इस रोग से ग्रसित होते हैं, इसके अतिरिक्त कुपोषित, कमज़ोर प्रतिरोधी तन्त्र व एड्स रोगियों में भी इस रोग से ग्रस्त होने की प्रबल सम्भावना होती है। अतएव इस रोग से संक्रमित सभी व्यक्तियों को कुष्ठ रोग नहीं होता है। वर्ष 2016 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 91 देशों की सूची निकाली, जिनमें कुष्ठ रोग था। इसमें से 70 प्रतिशत रोगी भारत, नेपाल व म्यांमार में थे। आज भी विश्व के 50 प्रतिशत नवीन रोगी भारत सें ही ज्ञात होते हैं।[4]

रोग के प्रकार, लक्षण व संक्रमण प्रक्रिया– यह रोग मुख्यतः दो रूपों में प्रदर्शित होता है।

1. त्वचीय गांठो के रुप में (नोडयुलर लेप्रोसी)– यह रोग ज्यादा प्रबल रुप से दृष्टिगोचर होता है। इसका प्रभाव शरीर के किसी भी भाग पर हो सकता है परन्तु चेहरे, हाथों व उदर भाग में अधिक होता है, इसमें त्वचा पर गांठें पड़ जाती हैं।

2. **तन्त्रिका कुष्ठ रोग(लेप्रोमेटस लेप्रोसी)–** यह रोग शरीर के केन्द्रीय तन्त्रिका को नही वरन् परिधीय तंत्रिका तंत्र की तंत्रिकाओं को प्रभावित कर उन्हें नष्ट करने लगता है परिणाम स्वरुप प्रभावित तंत्रिका से सम्बन्धित अंग में संवेदन शून्यता उत्पन्न हो जाती है। जिसके कारण जलने की पीड़ा अथवा स्पर्श की अनुभूति नहीं होती है। शरीर के ठंडे भागों जैसे हाथों व पैरों में इसका प्रभाव अधिक होता है। इस रोग का प्रारम्भ संवेदन शून्यता से होता है और अन्त में प्रभावित अंगों में विकृति होकर उनका विगलन होने लगता है।[5] यह रोग निष्क्रिय अवस्था में गांठों वाले कुष्ठ रोग(टयूबरक्यूलोसाइट लेप्रोसी) के रूप में प्रदर्शित होता है एवं सक्रिय अवस्था में यह शारीरिक विगलन कुष्ठ(लैप्रोमेटस लेप्रोसी) रूप हो सकता है। कुछ रोगियों में दोनों ही अवस्थायें पायी जा सकती हैं। नेत्र की तन्त्रिकाओं में संक्रमण होने पर नेत्र में गम्भीर संक्रमण तथा दृष्टिलोप हो जाता है। यदि इस रोगाणु का संक्रमण प्रभावी तन्त्रिका (मोटर नर्व) पर होता है तो सम्बन्धित अंग आकार विकृति एवं लकवा से ग्रस्त हो जाता है। परानुकंपी तन्त्र पर कुष्ठ संक्रमण होने पर रक्तचाप, हृदय गति, पाचन क्रिया प्रभावित हो सकती है, मल एवं मूत्र विर्सजन की समस्यायें भी उत्पन्न हो जाती हैं, इसके अतिरिक्त बालों का झड़ना, स्वेद ग्रन्थियों का निष्क्रिय होना, रूखी त्वचा जैसे लक्षण भी कुष्ठ रोग के कारण हो सकते हैं।

2. **कुष्ठ रोग का संक्रमण–** सामान्यतः जब भी किसी जीवाणु का संक्रमण होता है हमारे शरीर में पायी जाने वाली भक्षक कोशिकायें(मैक्रोफेजेस) उन्हे अन्तःग्रहित करके नष्ट कर देती हैं। परन्तु क्षय रोग अथवा कुष्ठ रोग के जीवाणु *माइकोबैक्टेरियम टयूबरक्यूलोसिस* एवं *माइकोबैक्टीरियम लैपरी* का संक्रमण होने पर यह जीवाणु भक्षक कोशिकाओं में पहुचने पर नष्ट होने के बजाय सामान्य रूप से द्विगुणन करके वृद्धि करने लगते हैं। ऐसा इसलिये होता है क्योंकि अन्य जीवाणु परआक्साइड सक्रियता के कारण, भक्षक कोशिकाओं की अम्लीयता(पी0एच0) बढ़ने के कारण नष्ट हो जाते हैं, परन्तु कुष्ठ रोग व क्षय रोग के जीवाणु में कुछ ऐसे विकार पाये जाते हैं जो भक्षक कोशिकाओं की अम्लीयता बढ़ने से

रोक कर उन जीवाणु की रक्षा करते हैं और इसीलिये शरीर में प्रवेश के बाद में जीवाणु नष्ट होने के स्थान पर वृद्धि करने लगते हैं।[6,7]

3. **कुष्ठ रोग कारक**– यह रोग दण्डाकार जीवाणु (बैसिलस) द्वारा होता है–

3.1.*माइकोबैक्टीरियम लैपरी* – सन् 1872 में हेन्सन ने इस जीवाणु की खोज की यह मुख्यतः मनुष्य में कुष्ठ रोग उत्पन्न करता है। मनुष्य के अतिरिक्त यह नौ धारियों वाले आरमाडिलो में भी पाया गया है।
3.2. ***माइकोबैक्टीरियम लैपरीम्यूरियम*** – यह जीवाणु चूहों में कुष्ठ रोग जैसे लक्षण उत्पन्न करता है। अध्ययनों में पाया गया है कि कभी–कभी यह जीवाणु मनुष्य में भी कुष्ठ रोग उत्पन्न कर देता है।[8,9]
3.3. माइकोबैक्टीरियम लैप्रामेटोसिस– कुष्ठ रोग के इस जीवाणु का पता वर्ष 2009 में चला। विश्व का यह पहला रोगी था जिसकी मृत्यु इस जीवाणु जनित कुष्ठ रोग के कारण हुयी।

4. **कुष्ठ रोग का परीक्षण**–

4.1. **लैप्रोमीन परीक्षण**– कुष्ठ रोगी इस परीक्षण के लिये धनात्मक होते है। कुष्ठ रोगाणु से बनाये गये लैपरामीन का 0.1 मि0ली0 को अधोत्वचीय स्तर में प्रविष्ट कराने के 2–3 दिन के पश्चात एक फफोला पड़ जाता है जो 20–30 दिन तक लगातार बढ़ता जाता है और लगभग 1.0 से0मी0 का वृत्ताकार व्रण बन जाता है जिसके केन्द्र में मवाद जैसा दिखाई पड़ता है ये व्रण बहुत कठिनाई से ठीक होता है। ये परीक्षण कुष्ठरोग की पुष्टि के लिये प्रयोग किया जाता था, परन्तु क्षय रोगियों तथा बी0सी0जी0 टीका लगे हुये लोगों में भी धनात्मकता दर्शाता है अतएव यह अधिक विश्वनीय नहीं है, अतः कुष्ठ रोग की पुष्टि के लिये अन्य परीक्षण करना आवश्यक हो जाता है।

4.2. **प्रयोगशाला परीक्षण**– कुष्ठ रोगी की त्वचा से गांठ को काट कर या संक्रमित त्वचा से होने वाले स्राव या रोगी के नासावेश्मों के स्रावण की स्लाइड बना कर **ज़ीहल–नीलसन** रंजक से अभिरंजित करने के पश्चात 1.0 प्रतिशत हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से धोने के बाद स्लाइड में अम्लरोधी दण्डाणु(ऐसिड फास्ट बैसिलाई) का अध्ययन किया जाता है। संक्रमित व्यक्ति की स्लाइड में जीवाणु समूहों में दिखाई पड़ते है।[8]

4.3. **डी0एन0ए0 फिंगर प्रिंटिंग**– जब कभी रोग की पहचान में दुविधा होती है या कुष्ठ रोगाणु की प्रजाति एवं औषधि संवेदनशीलता का पता लगाना होता है तो इस विधि का प्रयोग किया जाता है इस विधि में रोगी से प्राप्त रोगाणु को पी0सी0आर0(पौलिमरेज़ चेन रिएक्शन) यंत्र की सहायता से रोगाणु के डी0एन0ए0 को संवर्धित करके आणुविक जीव वैज्ञानिक विधियों से रोगाणु की प्रजाति का सटीक निर्धारण व औषधि संवेदनशीलता का विश्लेषण किया जाता है इस तकनीक का प्रयोग तभी करते हैं जब सामान्य परिक्षण से रोगाणु व रोग के कारण का निर्धारण करना सम्भव ना हो रहा हो।[10]

5. **उपचार**– पूर्व में कुष्ठ रोग का उपचार आयुर्वेदिक पद्धति में चलमूगरा के तेल जो *चलमूगरा ओडोरेटस* वृक्ष का उत्पाद है तथा पारे से किया जाता था। सन् 1815 में विलियमस रॉक्सवर्ग जो एक शल्य चिकित्सक एवं प्रकृति विज्ञानी थे कलकत्ता के बोटेनिक गार्डेन जिसे आज आचार्य जगदीशचन्द्र बोस इण्डियन बोटेनिक गार्डेन/आचार्य जगदीशचन्द्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा कहा जाता है, के वृक्षों की सूची बना रहे थे तो इस वृक्ष का नाम *गाइनोकारडिया ओडोरेटा* रखा गया। बाद में ज्ञात हुआ कि आयुर्वेद में जिस तेल का उल्लेख है वह *हाइडेनोकार्पस विधिताना* नामक वृक्ष से प्राप्त होता है जिसे सस्कृत में तुवकार व हिन्दी एवं फारसी में चलमूगरा कहा जाता है, भारत में चलमूगरा के तेल, उसके फल एवं अन्य अवयवों का उपयोग प्राचीन काल से ही किया जाता था, बाद में इसका प्रचलन चीन, फारस मिस्र एवं यूरोप में भी कुष्ठ रोग के उपचार हेतु होने लगा। सन् 1930 तक कुष्ठ रोग का उपचार प्राचीन विधियों से ही होता रहा उसके 1930 के अन्त में डेप्सोन और उसके व्युत्पनों का प्रयोग इस रोग के उपचार के लिये प्रभावी रूप से किया गया, परन्तु रोगियों के द्वारा उपचार में शिथिलता बरतने के कारण इस रोग के रोगाणु ने औषधि प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न कर ली और यह औषधि प्रतिरोधी(डेप्सोन प्रतिरोधी) दण्डाणु के कारण कुष्ठ रोग तीव्र गति से फैलने लगा, जिसका उपचार भी नहीं हो पा रहा था। वर्ष 1980 में बहु–औषधि उपचार प्रारम्भ किया गया, जिसमें डेप्सान, रिफैमासीन तथा क्लोफाजिमिन को मिलाकर 12 माह तक सभी संक्रमित रोगियों को अटूट रूप प्राथमिक स्वास्थ केन्दों व चिकित्सालयों में ही दी जाती है, उपचार अवधि का निर्धारण रोगी की रोग प्रसार करने की क्षमता के आधार पर निर्धारित किया जाता है। दिन में कई बार औषधि खाने में औषधि छूट जाने के कारण चिकित्सीय समस्यायें व उपचार में बाधा उत्पन्न होती थी अतः दिन में एक ही बार दी जाने वाली उपचार विधि अपनाई गयी यह औषधि रिफैम्पसीन, ओफलाक्सीन तथा मिनोसाइक्लीन को मिलाकर विकसित की गई जो रोगी के लिये खाने में सुविधा जनक है तथा औषधि लेने में व्यवधान भी नहीं उत्पन्न होता है। इससे रोग के प्रसार को रोकने में अधिक सफलता मिली है।

6. **निष्कर्ष**– मानव के विकास के इतिहास के साथ जुड़े इस रोग ने भारत सहित विश्व के अधिकांश देशों में अपने पाँव पसार रखे थे और जो एक समय विश्व का सबसे ज्यादा संक्रामक रोग माना जाता था, अब काफी नियन्त्रित कर लिया गया है। बहु–औषधि उपचार जागरूकता एवं रोग की पहचान की आधुनिक तकनीकों से विश्व में इस रोग के प्रसार में

कमी आयी है, परन्तु भारत में जागरुकता व शिक्षा के अभाव से अपेक्षित परिणाम नहीं मिले फिर भी भारत में इस रोग के प्रसार में लगभग 20 प्रतिशत की कमी आयी है, इस रोग एवं उपचार के प्रति जागरुकता बढ़ाने लिये प्रत्येक वर्ष जनवरी माह के अन्तिम रविवार को विश्व कुष्ठ रोग दिवस(वर्ल्ड लेप्रोसी डे) मनाया जाता हैं। यह दिन महात्मा गांधी जिन्होंने कुष्ठ रोगियों की अथक सेवा की, के निर्वाण दिवस की स्मृति में सन् 1954 से मनाया जाता है। जिसका प्रारम्भ फ्रेन्च लेखक राउल फोलेरे ने किया।

6. **आभार–** कुष्ठ रोगियों के कुछ चित्र अन्तरजाल(इन्टरनेट) से प्राप्त किये गये हैं।

संन्दर्भ

1. लेप्रोसी, रिपोर्ट डब्लू0एच0ओ0, 2016।
2. राबिन्स, जी0; त्रिपाठी, वी0 एम0; मिश्रा0 वी0 एन0; मोहंती, आर0 के0 एवं शिंदे, वी0 एस0(2009) प्राचीन भारत में कुष्ठ रोग के स्केलटल, ओल्डेस्ट एविडेन्स ऑफ लेप्रोसी फाउन्ड इन इंडिया, द टाइम्स ऑफ इंडिया, 27.05.2009।
3. हेन्सन, जी0 एच0 ए0(1874) इनवेस्टीगेशन्स कर्न्सनिंग द इटिओलॉजी ऑफ लेप्रोसी, नार्सक मैग लेइज़रविडेन्स कावेन, खण्ड–4, मु0पृ0 1–88।
4. हेन्सन डिज़ीज़ (लेप्रोसी)(2017) रिमोट सेन्टर्स फार डिज़ीज़ कन्ट्रोल एण्ड प्रिवेन्सन, डिपार्टमेन्ट आफ हेल्थ एण्ड हयूमन सर्विस यूनाइटेड स्टेटस।
5. मिश्रा, बी0; मुखर्जी, ए0; गिरधर, ए0; हुसैन, एस0; मालवीय, जी0 एन0 एवं गिरधर, बी0 के0(1995) न्यूरेटिक लेप्रोसीः फरदर प्रोग्रेशन एण्ड रिकग्निशन्स, एक्टा0 लेपराल, खण्ड–9, अंक–4, मु0पृ0 187–194।
6. मोल्डर,.जे0 डब्लू0(1985) कम्प्रेटिव बायलॉजी ऑफ इन्टर सेल्युलर पैरासिटिज़म, माइको बायोल0 रिव्यू, खण्ड–49, मु0पृ0 298–337।
7. रियूटर, ए0; फेहेल, सी0; रस्तोगी, एन0 एवं डेविड, एच0(1984) मैक्रोफेज इन्टरैक्शन विद माइकोबैकटेरियम इन्क्लयूडिंग *एम.लेपरी*, एक्टा लेपराल, जिनेवा, खण्ड–21, मु0पृ0 211–228।
8. तिवारी, एम0 के0(1982) स्टडी ऑफ माइकोबैक्टेरिया आइसोलेटेड फ्रॉम *राना टिग्रीना* एण्ड इट्स कम्प्रेटिव पैथोजेनीसिटी आन अदर एनीमल स्पीसीज़ेस, पी–एच0डी0 शोध प्रबन्ध, केन्द्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान(सी0डी0आर0आई) लखनऊ से), कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर, उ0प्र0, भारत।
9. रोजास, एस्पिनोसा ओ0 एवं लेविक, एम0(2001) *माइकोबैक्टीरियम लैपरी* एण्ड *माइकोबैक्टीरियम लेपरीम्यूरियम* इनफेसंस इन डोमेस्टिक एण्ड वाइल्ड एनिमल्स, रिव्यू साइ0 टेक0, अप्रैल, खण्ड–20, अंक–1, मु0पृ0 219–259।
10. मत्सुओका, एम0; इजुयी, एस0; बुध्यिावन, टी0; नाक्ता, एन0, एवं साकेकी, के0(1999) *माइकोबैक्टीरियम लैपरी* डी0 एन0 ए0 इन डेली यूजिंग वाटर एज़ पॉसिबिल सोर्स ऑफ लेप्रोसी इन्फेक्शन" इन्डियन ज0 ऑफ लेप्रोसी, खण्ड–71, अंक–1, मु0पृ0 61–67।

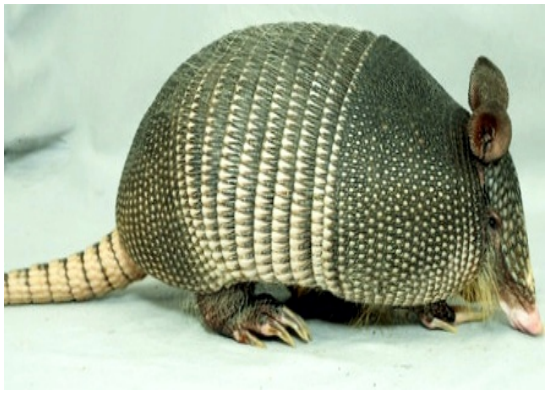

डेसीपस नोवेमसिनक्टस
(नौ धरियो वाला आरमाडिलो)

चूहे के पैर कुष्ठ दन्डाणु संवर्धन

नोडयुलर लेप्रोसी

लैप्रोमेटस लेप्रोसी

विगलनकारी कुष्ठ रोग

कुष्ठ रोग के कारण विकृति

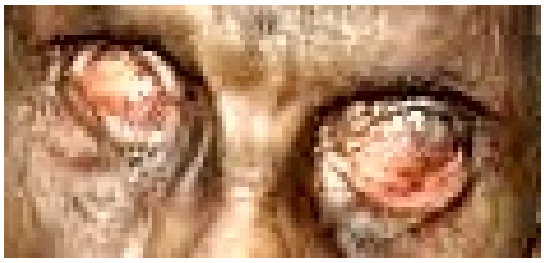

नेत्रों में कुष्ठ रोग

नेत्रों में कुष्ठ रोग

जिव्हा में कुष्ठ रोग

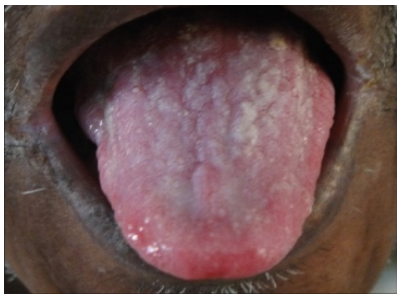

जिव्हा में कुष्ठ रोग

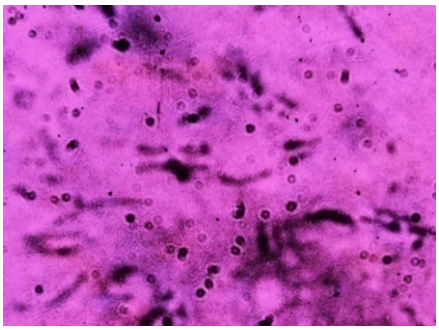

नासाश्लेष्म में दन्डाणु

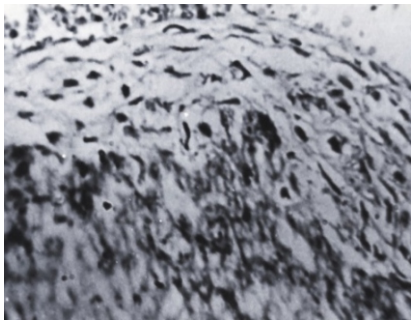

विगलन कुष्ठ में औतकी

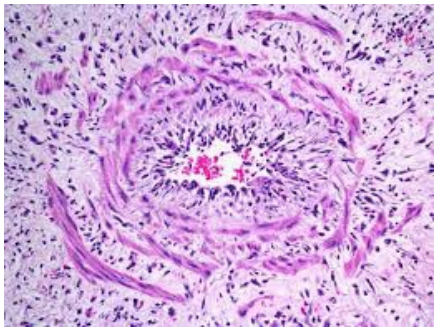

नोड्युलर लेप्रोसी की औतकी

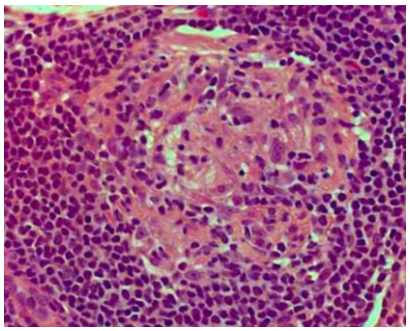

नोड्युलर लेप्रोसी की औतकी

जी एच ए हेन्सन

महात्मा गांधी कुष्ठ रोगियों की सेवा में